प्रकाशनार्थ आलेख

बाजार तो किसान को बर्बाद ही करेगा

–देवेन्द्र शर्मा

अमरीका, यूरोप सहित अन्य सभी धनी व औद्योगिक देशों में किसान किसानी छोड़ रहे हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है; क्यों? उन्हें तो बहुत मात्रा में सब्सिडी मिलती है। शिक्षित होने और तकनीकी ज्ञान का लाभ भी उन्हें मिला है। 'कमोडिटी मार्केट' में 'फ्यूचर ट्रेडिंग' भी वे कर सकते हैं। सुपर मार्केट के रिटेलस्टोरों से जुड़कर वे तो उपभोक्ता मूल्यों में एक बड़ा हिस्सा भी प्राप्त कर सकते हैं। फिर भी आखिर किसान किसानी छोड़ रहे हैं।

धनी व औद्योगिक देशों में किसान किसानी छोड़ रहे हैं, कैसे सम्भव हो सकता है, जबकि बाजार किसानो के लाभ के लिए काम कर रहे हैं? यह कैसे सच माना जाए जबकि निजी क्षेत्र को किसानों की आय बढ़ाने वाला माना जा रहा है। निश्चय ही कुछ अन्य कारण हैं, जिससे विकसित देशों में पारिवारिक खेत खत्म हो रहे हैं। धनी देशों में खेती के खत्म होने की जमीनी सच्चाई को या तो हम समझ नहीं पा रहे है या फिर 'बाजार अर्थव्यवस्था' और खेती के बारे में हमारी समझ ठीक नहीं है।

इसका सबसे बुरा पहलू तो यह है कि खेती के 'बाजार अर्थव्यवस्था' वाला नुस्खा भारतीय किसानों पर भी आजमाया जा रहा है। कोई यह जानना नहीं चाहता कि खेती का यह मॉडल पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान में आखिर कारगर क्यों नहीं हुआ? नीति–निर्माता और 'कृषि व्यवसायी कंपनियां' यह कहते नहीं थकतीं कि इस परिर्वतन से न केवल दूसरी हरित क्रान्ति आएगी बल्कि किसानों को पुरानी मंडी व्यवस्था से भी छुटकारा मिल जाएगा। वे कभी यह नहीं बताते कि खेती का यह मॉडल अमरीका में भी क्यों असफल हो रहा है ऐसा इतिहास में पहले कभी नहीं हुआ। आज जो सबसे बड़ा बदलाव आया है कि खेती 'कृषि की बहुराष्ट्रीय कंपनियों' कें हाथों में चली गई है।

यूरोप को ही देख लीजिए! यह खेती पर सबसे ज्यादा सब्सिडी देता है। खेती में प्रवेश, जमीन खरीदने, गाय–सुअर या घोडे, कृषि यंत्रों जैवविविधता के संरक्षण और बाड़ लगाने आदि अनेक तरह के कार्यों पर सब्सिडी प्राप्त की जा सकती है ग्रामीण ढांचा बहुत योग्यतापूर्वक काम करता है। किसानों को साख और बीमा आदि प्राप्त हैं और भारत की तरह मंडियां भी नहीं है। दूसरें शब्दों में कहें तो किसान पूरी तरह से निजी बाजारों से जुड़ा है।

लेकिन फिर भी, प्रति मिनट एक किसान खेती छोड़ रहा है। अमरीका में खेती से ज्यादा लोग तो जेलों में हैं, लगभग 70 लाख लोग जेलों में या पैरोल पर और जमानत पर हैं। केवल 7 लाख लोग ही खेती में हैं। धन्य है ऐसी किसानी नीतियां! जिनके कारण अमरीकी किसान खेती से अलग हो रहे हैं। अमरीका की 2000 में हुई पिछली जनगणना में तो पहली बार ऐसा हुआ कि किसानों की संख्या ही नहीं गिनी गई। किसानों की संख्या में इतनी कमी ने एक ऐतिहासिक मोड़ ला दिया है। कभी खेती की बात करने वाला अमरीका, आज कंपनियों और मशीनों की बात करता है।

दूसरी ओर, सुपर बाजारों से जुड़ी औद्योगिक कृषि व्यवस्था होने के बावजूद भी अमरीका में बिचौलियों की संख्या में बढ़ोतरी हुई है। बिचौलियों की यह नई प्रजाति पूरी तरह संगठित और आपस में जुड़ी हुई है। उत्तम नियंत्रकणकर्ता, मानक तय करने वाला, काम करने वाला और खुदरा व्यापारी सभी एक ही स्थान पर उपलब्ध हैं। बिचौलियों की संख्या बढ़ने के कारण ही किसानों की आय कम हुई है। अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है। 1995 में किसान ने जब अपने 1 डालर मूल्य वाले उत्पाद को बाजार में बेचा तो उसे 70 सेंट की आय हुई और दस वर्ष बाद, 2005 में किसान की 1 डालर मूल्य की बिक्री पर आय गिरकर मात्र 4 सेंट रह गई; बाकि पैसा दलालों की जेबों में गया।

वालमार्ट, टेस्को, रिलांयस और भारती टेलीफोन जैसे वैश्विक व्यापारियों को खुदरा क्षेत्र में प्रवेश की बात बार–बार दोहराने वाले अर्थशास्त्रियों और समाजशास्त्रियों का कहना है कि कंपनियों की जो नई मूल्य श्रृंखला (जैसेः ई–चौपाल) बनाई गई है उसमें दलालों की भूमिका नहीं है, इसलिए मंडियों के बंद होने का खतरा बढ़ गया है; इसी कारण ये दलाल नाराज हैं; पर किसानों के लिए नई आशाएं और नये अवसर बढ़ेंगे। लेकिन सच्चाई तो यह है कि इसी वैल्यू चेन के कारण ही अमरीका के किसान कंगाल हुए थे। अगर मक्का की 'दूसरी हरित क्रान्ति वाली' स्थिति हुई तो, मैं सोच नहीं पा रहा हूं कि जब रिटेल चेन पर कंपनियां काबिज होंगी, तब भारतीय किसानों का क्या होगा?

अमरीका में किसानो की समस्याओं को जानकर सरकार ने खुद पहल करके उन्हें प्रत्यक्ष सहायता दी, कि शायद इससे समस्या हल हो जाए। किसानों को संघीय सहायता के रूप में हरेक को करीब 33,000 अमरीकी डालर प्रतिवर्ष प्राप्त होता है। कनाडा के 'राष्ट्रीय किसान यूनियन' ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया है कि खाद्य श्रृंखला में किसानों को तो ही घाटा ही हो रहा है, जबकि 70 'कृषि व्यवसायी बहुराष्ट्रीय कंपनियां' लाभ कमा रही हैं। अजीब बिडंबना है कि अमीर देशों में किसान केवल सरकारी सहायता पर ही जिंदा रह गये हैं।

दक्षिण एशिया कें देशों में पाकिस्तान के बाद अब भारत के 60 करोड़ किसानों की बारी है। अमीर और औद्योगिक देशों के किसानों की तरह अब भारत के किसान की बारी है, अत्याचार सहने की। छोटे किसान–समुदायों के पास जो कुछ भी है अब उसे कब्जाया जा रहा है। यह काम न केवल 'कृषि व्यवसायी बहुराष्ट्रीय कंपनियां' कर रही हैं, बल्कि निजी बैंक और नई माइक्रोफाइनेंस (स्वसहायता समूह) भी संगठित महाजन की जगह निजी सूदखोरों को बाजार में उतारकर अपने कार्यों का दायरा बढ़ा रहे हैं। मंशा साफ है 'जैसा कि आईसीआईसीआई के प्रमुख के. बी. कामथ ने बताया है कि ग्रामीण क्षेत्रों से बहुत पैसा कमाया जा सकता है।'

इसलिए यह समझ साफ बना लेनी चाहिए कि बाजार में किसान की कहीं जगह नहीं है। यह नया 'बाजार अर्थव्यवस्था' का नुस्खा किसानों के लिए नहीं है। इससे न तो गांव को मकान मिलना है और न ही उनके बच्चों को स्कूल। वैश्विक अनुभव तो यही सिखाता है कि यह नुस्खा केवल 'कृषि व्यवसायी बहुराष्ट्रीय कंपनियों' के पेट भरने के लिए है। कौन कहता है कि किसान इस 'बाजार अर्थव्यवस्था' में अपना हिस्सा ले सकता है?

प्रस्तुति– मीनाक्षी अरोरा

शब्द संख्या–890

आलेख प्रकाशित होने की स्थिति में अखबार की कतरन और पारिश्रमिक राशि 'पीपुल्स न्यूज नेटवर्क' दिल्ली के पते पर भेजें।

पीपुल्स न्यूज नेटवर्क संपादक मंडल– अमित सेन गुप्ता, अरुण अग्रवाल, भारत डोगरा, ई पी मेनन, हर्ष डोभाल, जावेद नकवी, प्रशांत भूषण, संजय काक

(समाचार–विचार सर्विस) कार्यकारी सम्पादक –शिराज केसर, पीएनएन, 14 सुप्रीम एन्क्लेव, मयूर विहार फेज 1, दिल्ली–91, फोन–011,22756796 ईमेल–peoplesnewsnetwork@gmail.com